संस्थापक संपादक : दूधनाथ सिंह : 1975

प्रतिरोध की संस्कृति का रचनात्मक हस्तक्षेप

वर्ष : 11 अंक : 22 जनवरी-जून, 2017

संपादक
विनोद तिवारी

संपादन सहयोग
अजय आनंद
आशीष मिश्र

पक्षधर पुस्तिका-2

आद्य नायिका : अरुणाभ सौरभ की लंबी कविता

वेब पता
www.pakshdhar.com

अक्षर संयोजन

कम्प्यूटेक सिस्टम
ई-17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32
आवरण : दीदारगंज की यक्षिणी

मूल्य

यह अंक : ₹ 50

सदस्यता

वार्षिक : ₹ 200, संस्थाओं के लिए : ₹ 300 (डाक खर्च सहित)
पंचवार्षिक : ₹ 1000
आजीवन : ₹ 2500
विदेश के लिए : 75 $

संपादन/प्रकाशन : अवैतनिक/अव्यावसायिक

स्वामी-संपादक-प्रकाशक-मुद्रक विनोद तिवारी, सी-4/604, ऑलिव काउण्टी, सेक्टर-5, वसुंधरा, गाजियाबाद-201012 के लिए बी.के. ऑफसेट, एफ-93, पंचशील गार्डेन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 से प्रकाशित और मुद्रित।

प्रकाशित रचनाओं की रीति-नीति या विचारों से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। संपादक और लेखक की अनुमति के बिना प्रकाशित सामग्री के किसी भी तरह के उपयोग की अनुमति नहीं होगी।

सम्पर्क

सी-4/604, ऑलिव काउण्टी, सेक्टर-5
वसुंधरा, गाजियाबाद-201012
फ़ोन : 0120-4572303
मो. 09560236569
ई-मेल : pakshdharwarta@gmail.com

PAKSHDHAR
A Bi-Annual Literary Magazine
Editor : Vinod Tiwari
Language : Hindi

ISSN : 2231-1173

प्रस्तावना

पटना के नजदीक दीदारगंज में गंगा नदी के किनारे सन् 1917 ई. में स्त्री की एक कलात्मक प्रस्तर मूर्ति प्राप्त हुई। इसे दीदारगंज की यक्षिणी के नाम से जाना गया। 2017 में इसकी प्राप्ति का शताब्दी वर्ष है। मौर्यकालीन यह मूर्ति अपने नाक-नक्श, अंगों के यथेष्ट समानुपातिक कटाव, उठान और वक्रता, चित्ताकर्षक गढ़न और ओपदार पेंटिंग की अद्‌भुत कला के लिए मशहूर है। माना जाता है कि, यह मूर्ति यूनानी और मौर्य कला की साझी विरासत है। इस मूर्ति का एक हाथ टूट चुका है। पटना संग्रहालय में मौजूद मूर्तियों में यह सबसे सुंदर मूर्ति है और अलग से लोगों का ध्यान खींचती है। यह बिहार की ही नहीं पूरे हिंदुस्तान की एक अमूल्य धरोहर है।

पटना के तत्कालीन कमिश्नर मिस्टर ई.एच.एस वॉल्स के एक पत्र के मुताबिक यह मूर्ति गुलाम रसूल नाम के एक आदमी को दीदारगंज में गंगा नदी के तट पर फैले गाद के नीचे की खुदाई करते हुए मिली थी। परंतु, जनश्रुति के अनुसार इसके पाये जाने की कुछ और ही कहानी प्रचलित है। कहा जाता है कि, दीदारगंज में गंगा के किनारे, एक धोबी धरती से लगे हुए एक शिलापट्ट पर कपड़े धोता था। एक दिन, गाँव में एक साँप निकला। साँप निकला, साँप निकला का हल्ला सुन गाँव वाले एकत्र हो गए और साँप को मारने की युक्ति ढूँढने लगे। इधर कोलाहल सुनकर साँप वहाँ से गंगा के किनारे उस ओर भागा जहाँ धोबी कपड़े धोता था। वह शिलापट्ट के नीचे-नीचे होते हुए कहीं सरक गया। ग्रामीणों ने जब उसे ढूँढ

निकालने के लिए शिलापट्ट के नीचे की मिट्टी को खोदना शुरू किया तो पाया कि जिस शिलापट्ट के नीचे वो खुदाई कर रहे थे, वह असल में किसी शानदार मूर्ति का भाग था। पूरा खोदकर मूर्ति को बाहर निकाला गया। वही मूर्ति बाद में 'दीदारगंज की यक्षिणी' के नाम से प्रचलित हुई।

दीदारगंज की इस यक्षिणी को युवा कवि अरुणाभ सौरभ ने अपनी कविता 'आद्य नायिका' में उकेरा है। अरुणाभ सौरभ की यह अत्यंत लंबी और महत्वाकांक्षी कविता है। 'पक्षधर' में अनुज लुगुन की लंबी कविता 'बाघ और सुगना मुंडा की बेटी' प्रकाशित हुई थी। अपने वितान में यह कविता उससे भी लंबी है। अरुणाभ ने इस कविता में इतिहास, मिथक और कवि-समय तीनों को एक ऐसा रचनात्मक आयाम दिया है जिससे दीदारगंज की यक्षिणी सौ साल बाद पुनः एक नई भाव-भंगिमा और अर्थ-छवि के साथ हमारे सामने आती है। जहाँ एक ओर यह कविता वज्जि, पाटलीपुत्र, काशी, विक्रमशिला, नालंदा आदि प्राचीन गणतंत्र और नगरों, उनके बीच के आपसी वैमनस्य, उनकी दुरभिसंधियों और षड्यंत्रों के साथ-साथ ज्ञान, विज्ञान और कला की प्राचीन उपलब्धियों को यथाप्रसंग उपस्थित करती है वहीं एक स्त्री के रूप और लावण्य के साथ-साथ उसकी प्रवंचना और नियति को भी सामने ले आती है। कविता में एक सुग्गी की हत्या को कवि ने जिस ढंग से रखा है वह कविता में प्रतीकार्थ रचने के कवि-सामर्थ्य को दर्शाता है। सुग्गी की हत्या प्रश्नों, विचारों और तर्कों की हत्या है :

और सुग्गी का प्राणांत
विचार फिर-फिर मारा गया
और हत्या हुयी कला की।

यह लंबी कविता यक्षिणी के सहारे देवलोक, गंधर्वलोक से लेकर मृत्युलोक तक, पूरी पितृसत्ताक संरचना को प्रश्नांकित करती है। कवि ने इस बात को दोहराया है कि, स्त्री के बिना वह चाहे देव पुरुष हो या गंधर्व या इस धरती का सामान्य पुरुष, किसी के अस्तित्व की कल्पना संभव नहीं। प्रसंगतः, असीमा भट्ट की एक कविता का जिक्र करना जरूरी लगता है। उस

कविता का शीर्षक ही है—'दीदारगंज की यक्षिणी'। असीमा ने अपनी इस प्रेम कविता को पूरी दुनिया में स्तन-कैंसर से जूझ रही स्त्रियों को समर्पित किया है। असीमा की यह प्रेम कविता यक्षिणी के उन्नत वक्ष से शुरू होती है, फिर स्त्री के स्तन-कैंसर की बीमारी और उसके प्रेमी द्वारा उसकी उपेक्षा से होते हुए स्त्री के वजूद के साथ खत्म होती है :

लेकिन मैं अपना वजूद कभी नहीं खो सकती
मैं सिर्फ प्रेमिका नहीं!
सृष्टि हूँ,
आदि शक्ति हूँ,
और जब तक शिव भी शक्ति में समाहित नहीं होते
शिव नहीं होते...
मैं वैसे ही सदा-सदा रहूँगी
सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बन खड़ी
शिव, सत्य और सुंदर की तरह...। —असीमा भट्ट

असीमा, जहाँ कविता का अंत करती हैं, उसके अंत और अरुणाभ की कविता की कुछ पंक्तियों के संदर्भ के चलते वह कविता प्रसंगतः यहाँ याद हो गयी।

अरुणाभ की 'आद्य नायिका' को एक प्रेम कविता की तरह भी पढ़ा जा सकता है। कवि का अन्तर्मन बार-बार यक्षिणी को पुकारता है, उसके मौन को खोलना चाहता है, उसको छूना चाहता है, अपनी बनाकर उसे पाना चाहता है, वह प्रतीक्षातुर है :

और तुम आकार
तोड़ दो प्रतीक्षा
जीवन के सारे तप
सारी साध
सारे नियम
पूरे हुए

अब मर्त्यलोक की
सीमाओं को तोड़कर
करेंगे प्रेम।

कवि अपनी इस आद्य नायिका को, संग्रहालयों की बंदिनी नायिका को प्रेमातुर होकर पुकारता है। उसकी इस कामना में कविता खत्म होती है : जीवित रहूँ तो तुम्हारी बाँहों में रहूँ, तुम्हारी छाती पर सर रख कर और मरूँ तो तुम्हारी गोद में। इस उत्कट कामना से 'उर्वशी' (दिनकर) के कुछ प्रसंगों की याद ताजा हो उठती है।

पुस्तिका के क्रम में यह पक्षधर की दूसरी पुस्तिका है। पहली पुस्तिका गोरख पांडेय की एक अधूरी डायरी के रूप में प्रकाशित हुई थी। दीदारगंज की यक्षिणी के प्रकाश में आने की शताब्दी वाले वर्ष में अरुणाभ सौरभ की कविता लंबी कविता 'आद्य नायिका' को पक्षधर के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें खुशी हो रही है।

–विनोद तिवारी

आद्य नायिका

कंक्रीट की बनी
बहुत ऊँची
नग्न मूर्ति खड़ी है
शहर को
सुंदर बनाने के
रियाज के बीच
उसके गुप्तांग पर
लगा गया है कोई गोबर
उसके अंगों पर
कोई पान-गुटखा थूक गया है
उखड़ रही रंगों की परतें
गंदे-भद्दे रंग चिपक रहे हैं
उसकी कमर के नीचे
टखने, घुटने, पैरों पर

मूर्तिकार का नाम
पहले दिखता था पट्ट पर
'अनिल पृथ्वी'
अब मिटता जा रहा है

यह न तो
आपरूपी मूर्ति है
न ऐतिहासिक
इतिहास इसके
स्वरूप-शिल्प में
नाम मात्र है
मंत्री-जिलाधीश के संयुक्त-उपक्रम में
पटना संग्रहालय से देखकर
बनवाया गया सहरसा में
पर बहुत विशाल
पर्यटन केन्द्र बनने के क्रम में
मुर्दघाटी से
नरकंकालों के ढेर
अपवित्र बर्तनों
श्राद्ध-कर्म के समस्त त्याज्य
वस्तुएँ
इत्यादि हटाकर
सुंदर-विशाल तालाब
बनवाया गया
—'मत्स्यगंधा'

टिकट कटवाकर
पहली बार यहाँ
पैडिलवोट में
नौका-विहार
किए थे हम
इस अपने शहर

सहर-सा में

एक ही समय
मत्स्यगंधा तालाब के बीच
पराशर और मत्स्यगंधा की
संभोगरत
प्रस्तर प्रतिमा
उसके सम्मुख
मत्स्यगंधा की
एकल मूर्ति
के सम्मुख
'रक्तकाली'
'चौंसठ योगिनी'
मंदिर का प्रवेश द्वार
और
मंदिर की घंटाध्वनि
को सुनती
दिन-रात
रेलवे-लाइन के सामने
तालाब के सामने
बिल्कुल
प्रहरी की तरह
खड़ी है—
'दीदारगंज की यक्षिणी'...।

हम लोग एक साथ
बड़े हुए हैं
तब जबकि,

मेरी उम्र महज सात साल थी
मैं मूर्ति के पैर से थोड़ा ऊपर तक आता था
सोचता हुआ कि
बड़ा होऊँगा तो
पहुँच जाऊँगा
मूर्ति की कमर तक
समय के साथ

कुछ दिनों बाद
अचानक मूर्ति की कमर पर
मैंने फेर दिए हाथ
टकरा गए जो
नितंबिनी के नितंब से
शरीर में हुई सिहरन
और झुरझुरी ने बताया
कि अब मैं
जवान हो रहा हूँ

और मूर्ति
गहरे अवसाद में
तब से अब तक
कड़कड़ाती बिजली
कितनी झमाझम बारिश
कितनी ठंड
कितनी गरमी देख-देखकर
मेरे लिए बचपन—
से जवानी के बीच की
कहानी की एक निशानी है—

—'दीदारगंज की यक्षिणी'

मौर्यकाल से भारत के इतिहास का विवरण
देते रहेंगे देशभर के विद्वान-इतिहासकार
शास्त्रीय-लोक-धार्मिक
कलाओं-कथाओं में मेरे लिए
मेरे शरीर में होने वाली सिहरन की भाषा में
लिखा गया
पहला नाम है
—'दीदारगंज की यक्षिणी'

बरसों बाद
उस प्रस्तर प्रतिमा के
निकट जाकर
उसे छूने को आगे हाथ बढ़ाता हूँ
कि पटना के संग्रहालय में
पहुँच जाता हूँ
चँवरधारिणी
पॉलिशधारी
चमकदार प्रतिमा का
एक हाथ टूटा हुआ है
उसके शरीर को तराशकर
बनाए गए स्तन
छूने को हाथ बढ़ाता हूँ
और टकराते हैं हाथ
झनझनाहट होती है
पूरी देह में

और इतिहास का पहिया
घूम जाता है तेजी से,
पहुँच जाता हूँ
अंधेरे वर्तमान से
प्रकाशमान भूत की ओर
इतिहास-ग्रंथों के पात्रों के बीच
खोते हुए
सुनहरे अतीत में
मौर्यकाल में
मगध में
पाटलीपुत्र में
जहाँ सबकुछ सुव्यवस्थित है।

हर व्यवस्था की
अपनी एक और व्यवस्था है
इस एक और व्यवस्था में
या तो,
अवांतर कथा है
या षड्यंत्र...
भोर-सांझ-रात

2

वहीं
उसी साँझ का
पाटलीपुत्र का सूरज
बिछुड़न के दर्द को पीकर

काला होता
पर गेरुआ होकर
विलीन हो गया
उसी साँझ
पंछी घोंसले में
हर साँझ की तरह
लौट रहे थे
और,
उसी साँझ
हम-तुम
अंतिम बार मिले थे
और फिर कभी
मिलने की आशा
नाममात्र बची थी

और मौर्यकाल की सबसे
सुंदर प्रतिमा
के निकट आ जाता हूँ
यहाँ यक्षिणी तुम
मेरी प्रतीक्षा में हो
और मैं,
रत्नों से भरे थाल को
तुम्हारी ओर बढ़ाता हूँ
और छूट जाता है
तुम्हारे हाथ से
वह थाल
झ...न्..न...न...
की आवाज़ के बाद

तुम्हारे
हाथ से छूटे हुए
उस थाल के
बिखरे रत्नों
को समेटकर
तुम्हारे हाथ के
पहले आभूषण
'केयूर वलय'
को उतारकर
हौले-हौले
बहती हवा में
कक्ष का
पट्ट बंद कर देता हूँ
और तुम
दीपक की लौ
बुझा देती हो

रत्नों के
प्रकाश से जगमग रात में
देखो मुझे
निकट से देखो
यक्षिणी...मैं...
तुम्हारा
यक्ष...!!!
जन्म-जन्मांतर से
तुम्हारा प्रेमी
तुम्हारा अपना
तुम्हारा बरम

यह यक्ष
आज बरसों बाद
तुमसे
प्रेम-याचना
करने आया है
तुम्हारी आत्मा
तुम्हारे मन
तुम्हारी भावना
देह, बुद्धि सब कुछ को
तुम्हारे अनुसार, इच्छा से
तुम्हारे जैसा
तुम्हारा वरण करने आया है
वरण
निरावरण
निराहरण
सिहरन
सिहरन
तुम्हारी सिहरन
तुम्हारी देह की सिहरन
का साथी
तुम्हारी त्वचा को
गुदगुदाने वाली हवा को
अपनी अंगुलियों में
फँसाकर रखने वाला

आओ प्रिये
कांपते हाथों से
झहराकर इतिहास

तुम्हारे गालों पर
लिख दूँ
कि
चिरयुवा हो जाऊँ...!!

मीठी होती जा रही है रात
धीरे-धीरे
रजनीगंधा की महक में
बेला की महक
के बीच
कि जिसके अंधेरे को
समेटकर
सोख लिया है
तुम्हारी
पलकों के काजल ने

प्रपंची संसार से
मुक्त कर
प्रेम दो यक्षिणी
शरीर के रोमछिद्रों में
सिहरन के साथ-साथ
और चूमो
रक्तकमल पंखुरियों से कोमल
होठों के बीच
मेरे होठ छिपाकर
चूमो
और चूमो
और और

और
चूमो
और डूबने दो
वासना के नशे से तरल नदी में
उन्मत्त चूमो
और उतरने दो
वासना की तरल नदी को
लाल होती आँखों में
धीरे-धीरे
उठती हुई
समुद्र की लहरों-सी
सनन सनन....
रंग दो मुझे
अपनी देह के रंग में
यक्षिणी
मैं तुम्हारा यक्ष

हर सुख में
अंतिम साँस तक
सुख देने का वचन
और हर दुःख में
साथ रहने के वचनों के बीच

महाभारत के युधिष्ठिर को
पता है
यक्ष-प्रश्न के
उत्तर देने के बाद
कैसे धर्मराज बनना

आसान हो जाता है
युद्ध में अर्जुन के
गांडीव की निर्रथकता
जिसने किया सिद्ध
वो—किरात...

अग्नि, वरुण, वायु और इन्द्र के
घमण्ड को चूर-चूर करने वाला
जादू की शक्ति वाला (यक्ष)
दुर्जेय योद्धा
संसार के बलिष्ठतम वीर पुरुषों की
शक्तिवाला
अमूल्य रत्न भंडारों का स्वामी
पराविद्याओं का उपसंहार
...यक्ष
हाँ यक्ष हूँ
वही यक्ष जो
ध्वनि में, लय में
सुर में, ताल में
दिक्-दिक्, दिक्काल में
आदि अनंत में
नील पद्म शंख में
बलिष्ठ भुजाओं में
शिशिर भुजदण्ड में
वासना में, काम में
जल में, मंत्र में
तंत्र में, यंत्र में
अपनी-तुम्हारी निष्पत्ति

और इतिहास
जानना चाहता है...!

3

गंगा अविचल अविकल
बहती रही
मलिन होती रही
तुम्हारी आँखों के नीचे से
होकर जाता रहा रथ
साम्राज्य-विजय का
तुम्हारी स्मृतियों से,
बसाया गया नगर एक
—पाटलीपुत्र
जहाँ तुम्हारी
पलकों के
उठने-गिरने से
बनती-बिगड़ती रही सत्ता
नथ की झुनकी पर
थिरकता रहा राजधर्म

तुम्हारे घने केशों को
लहराते देख
पाटलीपुत्र में छाते रहे मेघ
और पाटलीपुत्र इसे देखकर ही
गर्जन, ताल सीखता रहा
तुम्हारी गर्दन

नीलग्रीवा बर्हिकण्ठे
जिससे एक तान में गाती तुम
—"पावन बना दो हे! देव सविता!"
और उदित होगा सौभाग्य सूर्य
मूंगों की छविवाले तुम्हारे ओष्ठ
जिसे देखकर
सिकुड़ जाए पद्मपंखुरी
मणिकांति जड़ित
दंत-पंक्ति की मुस्क्यान देखकर
चमकता रहा सूर्य
इन्द्रनील मणियों की-सी
किरण-कांति से दीप्त
तुम्हारे अरुण कपोल
तुम्हारे स्तन
जैसे धारित्री-पृथ्वी
दोनों हाथ
संसार को
वश में करने में सक्षम
तुम्हारी नाभि जैसे हवि
जंघाएँ जैसे
दो-दो यज्ञ ध्वजदण्ड
यज्ञ कुण्ड सदृश-योनि तुम्हारी
तुम्हारे घुटने पर
पुखराज की दो टुकड़ियाँ
तुम्हारे पाँव
आलक्तक लगे
पाँवों की
मंगलछाप से

रंग दो—पाटलीपुत्र

तुम मौर्यकाल की
सबसे सुंदर प्रतिमा
जिसकी निर्बंध सुंदरता
के आगे
वैशाली की आम्रपाली तुच्छ है
चाणक्य की चतुराई व्यर्थ है
व्यर्थ धनानन्द
व्यर्थ मुद्राराक्षस
व्यर्थ चन्द्रगुप्त
निरर्थक अजातशत्रु का
अखण्ड साम्राज्य
निरर्थक
बिम्बिसार
निरर्थक सम्राट अशोक
निरर्थक बुद्धत्व
निरर्थक मौर्यकाल

तुम्हारे होठों के कोर से आती
क्षीण हँसी-रेखा के आगे
फीका है धम्मं-शरणं

कुलवधू नहीं
नगरवधू नहीं
परिचारिका नहीं
नट्टिनी नहीं
यक्षिणी हो तुम

दीदारगंज की
जिसे देख-देखकर
शैशव से
यौवनगति तक
बढ़ता ही रहा
पाटलीपुत्र
काल से निडर-निर्भय
निर्भ्रांत

4

मगध की राजधानी
पाटलीपुत्र
स्वर्ण महलों,
अट्टालिकाओं वाला
पाटलीपुत्र
जिसके
शौर्य का गीत
सुनाकर नट्टिनियाँ नृत्य करती थीं
धम्म महामात्रों-ब्राह्मणों के
हिंसक-अहिंसक संघर्ष का
पाटलीपुत्र
न्यायाधिकारियों
श्रमणों
राजुकों
वाला
पाटलीपुत्र

उत्तर में गंगा
दक्षिण में विंध्य से लेकर
समूचा कलिंग
पूर्व में चम्पा
पश्चिम में सोन
और
राजगृह का कालांतरित रूप
पाटलीपुत्र

उद्यानों,
निकुंजों,
विहारों वाला
पाटलिपुत्र
दार्शनिकों,
विदूषकों
विद्वानों की शरण स्थली
और सम्राट अशोक के
शौर्य-विजय
और कुशल शासन की
लहरती ध्वज-पताकाएँ
जिस नगर में सूर्य
तब अस्त होता था
जब पाटलीपुत्र
स्वयं चाहता हो
दिव्यावदान महाग्रंथ की
बौद्ध-गाथाओं से पूछो
सर्वास्तिवादी विनय से
दीर्घागम से

उदान से
स्थिविर गाथा से
बौद्ध चर्याओं के नियम
कुमारलात की
'कल्पना मण्डितिका' ग्रंथ में देखो
क्या पाटलीपुत्र
दुर्बल उत्तराधिकारी के
प्रभाव में नष्ट हुआ है
या प्रतिज्ञा दुर्बल सम्राटों ने
निर्बल-निष्क्रिय
बना दिया पाटलीपुत्र
और विश्व का प्राचीनतम व नगर
इतिहास में ही खो गया
अन्यथा
सभ्यता की प्राचीनता भव्यता में
एथेंस-रोम कहाँ टिक पाता
पाटलीपुत्र के आगे

तुम्हीं ने कहा था यक्षिणी
कि पाटलीपुत्र
ब्राह्मणों और बौद्धों के
सत्ता-वर्चस्व की नीति
और षड्यन्त्रों से
तबाह हुआ
कलिंग विजय के उपरांत
कलिंग के
असंख्य विधवाओं बच्चों की
आह से

शापित हुआ
यह नगरराज
और सैनिकों की
रक्तश्लथ शवों की
और उसके कटे-फटे अंग
और रक्त की दुर्गंध और
रक्त सनी धरती पर
कीच में डूबा हुआ
नगर ध्वज
स्वयं गिरता रहा
गिरता रहा

असंख्य विजयी अश्वों की
हिनहिनाहट से काँपता नगर
अनेक वंशों के
अभिमान और टकराहट
से ध्वस्त
असंख्य साम्राज्यों के
बनते-बिगड़ते
इतिहास का साथी
एक नगर
इतिहास में ही
सिमटकर रह गया

तुम्हीं ने कहा था यक्षिणी
वज्जि में जब
खड़ा हो रहा था जनतंत्र
तब पाटलीपुत्र

रक्तस्नात,
काशी-करवट ले रहा था

विक्रमशिला से
नालन्दा से
कल-कल, छल-छल बहने वाली
गंगा की शांत-निर्मल धारा
के साथ
सिद्धि ले रही थी
ज्ञान-मीमांसा
पाटलीपुत्र पहुँचते ही
रक्त के साथ
लाल-लाल
बहने लगी थी

उधर मिथिला में
कालांतर में
संपूर्ण कलाओं के साथ
आकार लेता रहा सूर्य
और अनगिन कलाओं के साथ
अनगिन दर्शन
विकसित होते रहे
और पाटलीपुत्र में
हत्याओं और षड्यंत्रों का
आख्यान रचता गया

त्राहिमाम करती जनता को
तुम्हारे रूप दर्शन

और कलाओं की
अपार लीला से
अनंत सुंदर रूप से
मिलता रहा संतोष
रूप के साथ
मिलती रही शांति
रूप की शांति
जैसे मलयानिल

तुम्हारा नृत्य देखने का
तुमसे परिचार का
सौभाग्य सुख
सम्राटों को ही मिलता हो
तुम्हें परिचारिका बनाना
अपनी क्षमता का अतिक्रमण है
तुम यक्षिणी हो मेरी
जिसकी काया के
रूप-दर्शन-मात्र से
विस्मृत होती हैं वे स्मृतियाँ
जिसमें बसा है
हत्याओं और षड्यन्त्रों का
एक नगर पाटलीपुत्र
जो देश को
समाज को
सम्मोहित आतंक से
डराता रहा है
जहाँ,
जनता के

मन-बुद्धि-विचारों पर
अधिकृत होती गई सत्ता
और अपनी तांत्रिक कला–क्रिया से
निरंतर सम्मोहित करती रही
और अपनी उपलब्धियाँ
गिनाती रही
–सत्ता...।

जिसकी आलोचना
राजद्रोह है
और राजद्रोह का परिणाम
प्राणदंड है

मार दिए गए
असंख्य विचारक
दार्शनिक
कलाकार
और उनके घरों को
उनकी किताबों के साथ
जला दिए गए
हत्याएँ होती रहीं
विचारों की
और फफक-फफक कर
रोता रहा
पाटलीपुत्र
अधजला
अधमिटा
वर्तमान के साथ

मुझे सब याद है
तुम्हीं ने कहा था...यक्षिणी...!!
और यक्षिणी
तुम्हारी अनंत सुंदरता
पर मुग्ध होकर
पाटलीपुत्र तुम्हारे नाम कर दूँ
तो पैरों से ठोकर मार देना
राजधानी को
क्योंकि;
यक्षिणी
दीदारगंज की यक्षिणी
तुम हो तो
यह पाटलीपुत्र है
तुम नहीं हो तो
यह एक दुर्घटना है
जिसका नाम
–पटना है...।

5

गोधूलि बेला मे
लोहित आकाश का सूर्य
मायावी सरोवर में
छिप जाने को आतुर
महाकाश से
महासमुद्र में

लौटते पंछियों का कलरव
फिसल रही ज्यों
वीणा पर मालकौंस
समय लौटकर घर आने का था
और हम
एक-दूसरे से
बिछुड़ रहे थे
सदा के लिए
और मिलन की आशा
नाम मात्र नहीं बची थी
और ताल बज रहे थे
धिन-धिन
धागे तिरकिट
तूना
कत ता
धागे तिरकिट
धिन तक

वियोग का क्षण
अनन्त काल तक
जब हम एक-दूसरे से
पृथक होकर कोई साधना करते
हम वियोग में जाने वाले थे
और चीथ रहे थे
कई प्रश्न हमें
कि;
ची...चीं...चीं...रट लगाकर
चींखती हुई आई सुग्गी

वो गा रही थी–
''प्रक्षिप्त यह संसार है
उद्‌भव बारंबार है
काँटों का सर संधान है
उस पर मगध का विधान है...''
विधि का विधान है...''
रटती रही सुग्गी
वन-उपवन में
महलों के ऊपर
कि इसी बीच
इसी उपवन का रक्षक
जोर से चिल्लाकर–
''चुप्प सुग्गी...!
तुम्हारी गर्दन मरोड़ दूँगा
तुम्हारे पंख नोच डालूँगा।''

बोली डरकर सुग्गी–
''नमो बुद्धाय!
नमो बुद्धाय!!
बुद्ध विचार में हिंसा
भैया तुम रक्षक हो, कि भक्षक
इतने क्यों आतुर
क्यों कुपित हो...?
चु...प्...प...सु...ग्...गी...
इस रक्षक को
और क्रोधित न करो
यह संसार
प्रक्षिप्त नहीं है

न मगध
काँटों का सर-संधान कर
नया विधान लिख रहा है
यह मगध का संसार
एकमात्र सत्य है
...सत्य है
...नित्य है
और मगध!!!
मगध अब
सत्य का नया अनुसंधान करेगा
सुन...
मगध पर अब
सत्यवादी ब्राह्मणों की
सत्ता होगी...

बोली सुग्गी–
–''तो फिर इस संसार में
या तो प्रवंचना रहेगी
या पाखंड रहेगा
चीं...चीं...

सु...ग्गी...इ...
अब इस संसार में
नहीं चलेगी बहस
नहीं रहेगा
महायान-हीनयान
वज्रयान-सहजयान
नहीं कोई श्रमण-भिक्षुक या स्थिविर

नहीं रहेगा...नहीं
पाटलीपुत्र पर अब नैष्ठिक ब्राह्मण की सत्ता होगी
योगगुरु पतंजलि के शिष्य
महान वीर योद्धा
मगध सेनापति
पुष्यमित्र होंगे सम्राट...!
कल सुबह होते ही
होगा राज्याभिषेक

बोली सुग्गी...
और सम्राट बृहद्रथ ...???
हा! हा! हा! हा!
अट्टहास करता रहा रक्षक
बोला–तुम्हारे प्रतिज्ञा दुर्बल सम्राट
श्रेष्ठवीर पुष्यमित्र के हाथों मारे गए
आज ही
अपने सभी सेनानायकों को
एकत्रित कर
तुम्हारे सम्राट को भी आमंत्रित कर
सेना के सम्मुख
अपनी तलवार से
वीर पुष्यमित्र ने
उड़ा दी उनकी गर्दन
वो आर्य-परंपरा के प्रतिकूल थे
जिनके कारण मौर्यवंश का
पतन हो गया
समाप्त हुआ बृहद्रथ का
कार्यकाल।

इसीलिए प्रातःकाल में
सूर्योदय के उपरांत
मगध की सत्ता पर
उसके सिंहासन पर
पुष्यमित्र शुंग का
अभिषेक होगा!
समाप्त हुआ मौर्यकाल...

सुनो!
सुनो!!
सुनो...!!!
समाप्त हुआ मौर्यकाल
सुनो! सुनो!!
प्रातःकाल सूर्योदय के साथ ही
मगध के स्वर्ण सिंहासन पर नये सम्राट
पुष्यमित्र शुंग का
अभिषेक होगा
सुनो! सुनो!! सुनो!!!
राजकीय आदेश है
जो बौद्ध भिक्षुओं का
कटा हुआ मस्तक
लेकर आएगा
उसे स्वर्णमुद्राएँ भेंट की जाएगी

न..हीं...ई...ई...
चीं-चीं करती रही सुग्गी
अनर्थ न करो
अन्याय न करो
नये सम्राट
अत्याचार मत करो

ठहर दुष्टे!
तुम्हें तुम्हारा भगवान बुद्ध
बुला रहा है
उन्हीं के पास
भेजता हूँ
कहकर हवा में
तलवार उछालकर
दो अगल-बगल छोर से
गिरे उसके अंग
छोटे-छोटे
रक्त से सनकर
धरती पर फड़फड़ाकर
गिर पड़ी सुग्गी...
नमो बुद्धाय...
और
और सुग्गी का प्राणांत
विचार फिर-फिर मारा गया
और हत्या हुई कला की
ढेर सारे
टिटहरी-बटेर
और असंख्य
कौवे-गिद्ध-चील
के आर्त्तनाद में
दहल गया पाटलीपुत्र

बृहद्रथ का कटा सिर लेकर
विचारों की हत्या
देखता रहा
पाटलीपुत्र

तुम कैसे रह सकती हो
इस हत्यारे साम्राज्य में
जहाँ
बहस नहीं कर सकती
तर्क भी नहीं
केवल परिचार
केवल परिचार-मात्र होगा
तुम्हारा धर्म
सम्राटों का
आदेश सिर्फ
पालन करने के लिए होगा
आदेश पर बहस
करने पर
तुम्हारी भी हत्या हो जाएगी

इसीलिए यह यक्ष
तुम्हें इस
हत्याओं के देश से
स्वतंत्र करने
कहीं दूर ले जाने
आया है

यहाँ जो बौद्धों के पक्ष में है

वो सावधान हो जाए!
उनके मस्तक में
भोंक दिए जाऐंगे
तलवार-भाले
मस्तक पर
घाव का काला रक्त
मवाद और पीव लेकर
हम-तुम कैसे विचरण करेंगे
अब पाटलीपुत्र में राजधर्म नहीं रहेगा
केवल कुतर्क
षड्यंत्र
अविचार
अविवेक
रहेगी हत्या
रहेगा पाखंड
शुंग वंश की स्थापना
और मगध से
लुप्त हो जाएगा मगध
विचारहीन
दिशाहीन
कलाहीन
तर्कहीन
जहाँ कुख्यात अपराधियों का
नग्न नर्तन होगा
समय की माँग है
जो तर्क करेगा
उसकी हत्या होगी
पलायन नहीं

आत्मरक्षा के निमित्त
विवेक सम्मत निर्णय
राजधर्म के विपरीत
विवेक से काम लेकर
दूर चलो पाटलीपुत्र से

अब पाटलीपुत्र राजधानी भी
नहीं रहेगी
विदिशा होगी
अखण्ड भारत की राजधानी
मध्य भूभाग का नगर
—विदिशा

6

मस्तिष्क के अंदर
दबाव ही दबाव
गहरे अंधकार में
इस नगर के
वर्तमान के साथ
आंखों के आगे
केवल अंधेरा
हृदय-गति बहुत बढ़ी हुई
साँसें तेज और तेज
और...
माथे की नीली नसें
फट जाने को आतुर

कंठ सूख जाने पर
जिह्वा और तालू में
चिपक जाने पर फिर उभरीं नसें
और क्रोध
और घृणा
जुगुप्सा
यह मृत्यु का भय
आसन्न मृत्यु
का गहनतम अंधकार
किंतु यह मृत्यु-भय क्यों?
हम यक्ष हैं
हम
अमर हैं

उभरती हैं
कई-कई आकृतियाँ
कई रथ के
टूटे पहिए लिए
धीरे-धीरे
उभरता है
मृत्यु का संगीत
अचानक
मृत्यु के भयंकर तांडव
में बदल जाता है
गहनतम अंधकार
और काली होती जा रही है रात
जहाँ
टिमटिमा रहे हैं

मगध पर संकटों के तारे
विचित्र-रहस्य-लोक की तरफ
बढ़ रही है रात
अपनी पूर्ण कालिमा में
अमावस की रात में यह
आकाश का कालापन है
या काल उगल रहा है
मृत्यु का भयानक अंधकार
केवल अंधकार
अहंकार से उपज अंधकार
ने मगध की सर्वशक्तिमान सेना को
त्राहिमाम् करने पर
विवश किया
और जनता 'त्राहि-त्राहि' का कोलाहल
मचाकर पाहिमाम् कर रही है

और प्रकाश की कोई क्षीण रेखा
कोई एक किरण
दीख जाती कहीं
तो, मार्ग आगे की ओर बढ़ता

कि अचानक
मुरझाते हुए
लोगों की भीड़
मशाल लेकर बढ़ती आ रही है
धीरे-धीरे जलती मशाल का प्रकाश बढ़ रहा है
कि उसी रौशनी में देखता हूँ
क्षीण प्रकाश के साथ

एक कटी हुई भुजा (विशालकाय)
बढ़ रही है आगे
निरंतर आगे
जिससे जनता में
भय-असंतोष और कष्ट है।

भीड़-लोगों की
शोकाकुल भीड़
बढ़ रही है
हरेक चेहरे पर घाव
हरेक हृदय में
पराजय-बोध
यह अंधकार
यह कालापन
भयानक
यह रात की कालिमा
और हरेक हाथ में
जलती हुई मशाल
रात का अंधकार
फाड़ने
ये कोई स्वप्न नहीं
पदचाप है
घोड़े का हिन-हिन
घायल
हाथियों का चिंघाड़
ये पराजित सैनिकों का दल
हमारी ओर बढ़ रहा है
पराजय के हाहाकार के साथ

मगध-पराजित
मौर्यवंश का अंत
पर ये सैनिक
यक्ष-सेना के हैं
हम हार चुके हैं
हमारी पराजय स्वीकार है अखण्ड भारत के
ग्रामवासियों
ओ! हारे हुए ग्रामवासियों
नगरवासियों
तुम्हारा नगर देवता
ग्राम-देवता
कुल-देवता
बरम-पितर
तुम्हें पुकार रहा है
सुनो! सुनो!
कोई सुन नहीं रहा
यह काल-ध्वनि
सब चुप
चुपचाप
हमें देखकर
तलवारें गिरा दिए
ये रक्त-श्लथ
पराजित आत्माएँ
या शरीर
या प्रेताकृति
सब मेरे भीतर
समा जाने को आतुर

और मुझे
तुम्हारी चुप्पी
अखर रही है
बोलो यक्षिणी
मैं तुमसे कुछ कह रहा हूँ

और जब तक
कुछ समझ पाता मेरा पराजित मन
वह विशाल भुजा
गिर गयी धरती पर
इतनी विशाल भुजा
किसकी हो सकती है
वह अपनी अंगुली उठाकर
क्या दे रही है
हस्त-संकेत
कि कहीं कोई
अब भी बची है
शक्तिशाली सेना
जिसके साथ मिलकर
लड़ने की आवश्यकता है।
या राज्य पर
आसन्न किसी अन्य
अनहोनी का संकेत है
यह हाथ है
या किसी
बिखरे लोगों को समूहबद्ध
करने हेतु
साथ लाने

एक हाथ
जो अलग-अलग
समूहों की रक्षा
करता आया था
वो हाथ भी
कट गया
कुछ समझ पाता
मेरा पराजित मन
मेरी हारी हुई बुद्धि
वो हाथ भी
अदृश्य!!

यक्षिणी!
ओ यक्षिणी!
हम तो
पहाड़ी झंखाड़ के साथ
उगे जंगली फूल हैं
उड़ते रहते हैं
टूट-टूटकर
हवा के साथ
प्रकाश हमें सूर्य देगा
पत्तों से छनकर आती
थोड़ी किरण
थोड़ी धूप की टुकड़ी
धरती पर
मिट्टी को प्यार से
सहलाने से पहले
पराजित यक्ष

तुम्हें बुला रहा है
दिव्य पहाड़ी से हौले
उतरकर
हवा में पंख लगाकर उड़ने

पराजय के लिए
मैं स्वयं निमित्त हूँ
किंतु बोध होता मुझे
अपने नायकत्व का
तो मुक्तिसंग्राम में
नेतृत्व करता
मिथकों या इतिहास से
मैं सीख नहीं पाया कुछ
विस्मृत हो गयी मेरी स्मृतियाँ
खो गयीं दिव्य शक्तियाँ
यक्ष, पराजित यक्ष
कायर कैसे हुआ
ओ ब्रह्माण्ड की शक्तियों
तुम साक्षी हो
हमारी समस्त वीरता का
फिर कैसे कायर था मैं
कैसे निरर्थक
जो बचा न सका मगध का वैभव
इतिहास यक्षों को
अब कायर कहेगा
इसी कलंक के साथ
अब जीवित रहेंगे हम
शक्तियों

क्या तुम बता सकती हो
कि हम;
देवताओं से कहाँ कम बलशाली थे?
हमारे संसार में
मातृशक्ति
प्रभावशाली थी

और तुम्हीं ने कहा था यक्षिणी
यक्ष-लोक में
पुरुष सत्ता और मातृसत्ता का
समतुल्य योग होता है।
स्त्रियाँ यहाँ
पुरुषों से ज्यादा
सिद्धि देती है
पराविद्या की
अधिकारी होती है
और इतिहास-पुरुष तो
निरर्थक शब्द है
क्योंकि इतिहास
क्या सिर्फ़ पुरुषों का इतिहास है
(राजपुरुषों का)
यहाँ यक्ष-गंधर्व-नाग और राक्षस
खलनायक बना दिए गए
आदिकाल से

यक्षिणी
ये यक्ष तुम्हारे बिना
विकृत-बेडौल और शक्तिहीन है

तुम्हीं से पहचान है
यक्ष की

अब तुम्हारा मौन तोड़ना है
तुम्हें बोलना होगा
न जाने कौन सा अधिकार है
पर तुम सर्वस्व हो मेरी
तोड़ दो मौन
व्याकुल मन
आकुल अंतस
अनगिन प्रश्नों से
जूझ रहा है
बोलो यक्षिणी
बोलो
बोलो
बोलो...

यक्ष बोलने का आग्रह
करता रहा
मुँह खोलना चाहती थी
बिल्कुल चुप्प
यक्षिणी
जैसे दबाकर रखी थी
अपने भीतर सुसुप्त ज्वालामुखी
तब जबकि काल भेष बदलकर
नये काल के आगमन की सूचना दे रहा था
इसीलिए चुप थी यक्षिणी
अपने सम्मुख इतिहास को बदलते देख रही थी

कि सत्य को आमंत्रित कर रही थी
हिंसा-कोलाहल के अखण्ड साम्राज्य
मगध में-पाटलीपुत्र में-संसार में
इसीलिए यक्षिणी चुप थी।

समय की ठूँठ कहानियों पर
सभ्यता मुँह के बल लटक चुकी थी
वमित रक्त पर संस्कृति सो रही थी
और बूढ़ा इतिहास
चीथड़े में लिपटा रो रहा था
ज्ञान नशे में डूब चुका था
और किसी कुँए में
गिरकर-सड़कर-फूलकर बह रहा था
और चुप थी यक्षिणी
दीदारगंज की यक्षिणी
उसने मुंह खोला
य...क्ष...
और गूंज उठी पहाड़ियों की श्रृंखला के बीच
ये उसकी आवाज़

सुनो यक्ष!
मैं यक्षिणी...

7

मैं यक्षिणी
मन की साध पूरी करने

प्रकाश की क्षीण रेखावाले
वर्तमान में
स्वप्न लोक से
यथार्थ की तलहटियों में
व्याकुल अंतर
आकुल मन में
जग की मलिन
कठोर गलियों में
आलिंगन में
महापाश में
विस्तृत पृथ्वी पर
नीलाकाश में
जीवन जटिल है
आ जाओ
कि इतिहास बनाने का समय है
आ जाओ
कि भोर होने को है
नट भैरव
और अहिल्या विलावल गाकर
स्वागत करेंगे भोर का
पुष्करावर्त्त पर्वत से
मेघों के बीच
बादल की टुकड़ियाँ लिए
झीनी-झिर-झिर
जो बरसेंगी बूँद आँगन में
उसमें तुम्हारा
आकुल अंतरतम है।

यक्ष!
अब बरसेगी जो बूँद
उसमें विद्रोह की आकुलता
और मिलन की आस है।
मेघ-पूर्व मेघ
मेघ-उत्तर मेघ
और
उसके साथ
तुम्हारा अमर संदेश
प्रियवर यक्ष
जितनी होगी वर्षा
उसमें तुम्हारा चुंबन है

आज आषाढ़ शुक्ल षष्ठी
इसको कहते हैं स्कन्द षष्ठी
हर दिव्य नगर में
विहार पर चलेंगे
प्रातः
स्कन्दराज खाण्डेराव के यहाँ
जहाँ की सौंधी गन्ध को
पीते हाथी
गन्धवाह से पकते गूलर

आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदा को
हम मेघ को अलकापुरी तक के
पथ का निर्देश कर
गुह्यक यक्ष
पाटलीपुत्र से

उज्जयिनी
देवगिरि
विदिशा
दशपुर
कुरुक्षेत्र
कनखल
हरचरणशीला
कैलाश
अलका
हर दिव्य नगर में
विहार कर
देवोन्थानी से
शापमोचन करेंगे
शापित हो गई
हमारी सभ्यता
तो
वसुन्धरा दर्शन को चलें
मेघ फिर से बनेंगे दूत
उस महाकवि की
कल्पना का हो विस्तार
मेघारूढ़ होकर
रामगिरी से अलका में
प्रकृति में
उसके प्रत्येक रूप में
वातावरण में
कृषि में—उसके सौंदर्य में
भोली भाली ग्राम नारियों
नेह भरे नयनों से

फिर-फिर पीना मेघ

ताजी जुताई से उठती गंध के समान
और मदमस्त गजराज सा
चलता हुआ मेघ
पृथ्वी को
कभी निकट से
कभी दूर से
देखता हुआ
अपने भीगे नेत्रों से
चलो मेघ
चलो भारत के
समस्त स्थलों की संस्कृति
प्रकृति को खोजने
स्वर्गवत् आश्रम बनाने
मंद-मंद पवन के साथ
शीतल-मंद-सुगंध
वाम भाग में चातक का
मधुर नाद
पंक्तिबद्ध अपनी चोंच में
प्रिया की चोंच को
लेकर चूमते
मानसरोवर के साथी हँस
ले लो गंगा का जल
ले लो रेवा का जल
पवित्र जल से सिक्त कर
हर लो काल का अंधकार

काल बदलकर
नए काल के
आगमन की सूचना दे
इसीलिए चुप थी
सत्य को आमंत्रित कर
कि असत्य, हिंसा और अविवेक
का नग्न नर्त्तन है
पाटलिपुत्र में
मगध में
संसार में

और तुम आकर
तोड़ दो प्रतीक्षा
जीवन के सारे तप
सारी साध
सारे नियम
पूरे हुए
अब मर्त्यलोक की
सीमाओं को तोड़कर
करेंगे प्रेम

कि प्रेम के प्रकाश
से झिलमिल करेगी रात
तेल से भीगी बाती के साथ
दिये में
समय-शिला पर अंकित गहन रहस्य
के आवरण को
उतारकर

उबल जाने देंगे
काम की मंदाग्नि पर
वासना के मृद्भांड में
भट्-भट्-भट् कर
प्रेम
कामोन्माद में
समूची देह में
कोर-कोर में
हल्की-सी टीस उभरकर
देह की नसों से बहकर
धमनियों-शिराओं में
झुरझुरी सी
रक्त के साथ
इसी आधार पर
बहुत करेंगे प्रेम

सखियों संग
समस्त संसार के
संग्रहालय में बंदिनी
आदि नायिकाओं
चमकदार शीशे की दीवार
और
संग्रहालय की कालिमा
के शीशे के साथ
चनाक् से
तोड़कर
वापस आ जाओ
आदि नायिकाओं

आद्य नारियों
कलाओं में

अब इतिहास से
निकलने का समय
कह रहा है
प्रतीकों में
कलाओं में

जिसका उत्तर
न कालिदास दे पाएँगे
न यक्षराज कुबेर

तुम आओ
और वामचरण के पदचाप सुन
असमय छा जाए वसंत
बौरा जाए आम मंजरी
कोयली, पपीहा, चातक के
यौवन गीत सुनकर
हो वसंत का आरोप
हमारी देह पर
शीतल-मंद-मंद
वासंती
अलसायी हवा
भर दे
गुदगुदी
देह में
कि रोमछिद्रों में

आए सिहरन
और सिसकारी ले
—सरसों के फूल से
रंग माँगेगे
पलाश से
शाल से
शमी से
मांगेंगे रंग

और ग्रीष्म की तपती
दोपहर में
शाल की डाल को
अपनी तरफ झुकाकर
शाल की छाया से
तुम्हें शीतलता दूँगी
यक्ष
शालभंजिका रूप में

या वर्षा की
झीनी-झीनी बूंद से
अपनी त्वचा के नीचे
तुम्हारे लिए
प्रवाहित कर लूँगी
हिन्द महासागर

और जब हर्ष के साथ
उदित होगा अगस्त
और रास्ते का जल

सूख जाएगा
उस बाट पर मैं दौड़कर तुम्हें पकड़ लूँगी
और ले चलूँगी देखने
शरद ऋतु का आकाश

और जब हल्की सर्द हवाएँ
हमारे रोम-रोम में
भर देंगी उम्मीद की सिहरन
और उस गुनगुनी सर्दी में
हेमन्त के प्रभाव में
जाड़े की गहरी रात में
कुहरा घना
और प्रकाश नाम मात्र नहीं
उस रात में
कुहरे की बारिश में
तुम्हारे स्पर्श से प्राप्त
करेंगे थोड़ी-सी गरमी

हर मास में
हर ऋतु में
नयी प्रकृति के पूर्ण आस्वाद के साथ
करेंगे प्रेम

और तुम
कानों के पास आकर
अपनी दंत पंक्ति से
कान की तल्ली को हल्के से
काटकर

मुझमें शक्ति का संचार करो
और
पद्म पंखुरी से
मेरी नाभि को सहलाओ

आओ प्रियवर
आज फिर तुम्हें
अंक में लूँ
इस समय सूर्य जो
चल रहा है
अपने प्रकाश में
उसमें मेरे मुखमण्डल का
रंग है

आओ प्रियवर
चम्बल की चौड़ी धारा के समान
अपने प्रेम से तुम्हें सींच दूँ
वेगवती, निर्विन्ध्याँ
कालिसिन्ध और गम्भीरा
जैसी आदि सरिताओं सी
आलिंगन में विस्तृत
आदिनायिकाएँ
महाकाव्यों में
जैसे करती रही हैं आलिंगन
अधर-पान में डूब जाओ
सरित-सागर संगम में
ज्यों उठती हो लहरें

गगन-गति को
सिद्ध-गंधर्व से
जितना प्रेम न मिला हो
सरिता पर मेघ की छाया
गंगा के पवित्र जल पर
श्याम मेघ की छवि
और प्रतिबिम्ब
गंगा पर मेघ
और तुम,
मेरे ऊपर
मेघ बनकर छा जाओ प्रियवर

पर्वत की तलहटी में
बहती रहे मन्दाकिनी
और मैं तुम्हारे वक्ष को
अपनी चँवर से सहला दूँ

मैं अपनी कंचुकी में
इन्द्रचाप युक्त
मेघमयूर
तुम्हारे लिए रखी हूँ
वृष्टि बनकर बरसो
एक-एक बूँद
मेरी देह पर
मैं प्रकृति हूँ
इतना जानती हूँ
कि मेरे सहचर्य के बिना
मुझमें होकर रहे बिना

तुम यक्ष नहीं हो सकते
मैं यक्षिणी
जिस दिन तुम्हें छोड़ दूँ
तुम योगी हो सकते हो
देवता
खग
मृग
प्रथम पुरुष
परम पुरुष
इत्यादि हो सकते हो
यक्ष नहीं हो सकते

त्रिभुवन जीत सकते हो
ब्रह्माण्ड को
अपनी शक्ति से
पराजित कर सकते हो
मेरे बिना
सर्वसिद्धि पा सकते हो
पर यक्ष नहीं हो सकते
परम सत्ता प्राप्त कर लोगे
पर मेरा साहचर्य ही तुम्हें
पुरुष बनाएगा
और यक्ष भी

आओ, प्रियवर
पर्वतों, पर विहार करने कैलाश अरिष्ठ, गन्धमादन
मंदार, सुमेरु, श्वेतगिरि
अलकानगरी में

प्रणयोपभोग की क्रीड़ाएँ करेंगे
पुष्पचयन कर
इतिहास क्रम बदल देंगे

युवतियों
ओ युवतियों
मदनोत्सव का अवसर है
कामदेव की पूजा करो
उद्यान-क्रीड़ा करके
सज्जित चरणों के
पदचाप से
असमय खिला दो
अशोक वृक्ष
मादक स्पर्श से
वृक्षों को कर दो
पुष्पित;
राग-रंजित

कलशधारिणी
चँवरधारिणी
दुग्धधारिणी
पृथ्वी देवी
मातृदेवी
यक्षिणी-प्रकट हो

उद्दाम यौवन से
वृक्ष की डाल को
अपने समीप लाने हेतु

झुकाने की मुद्रा के साथ
काम और राग के संदेश
के साथ
जागृत हो नृत्यरत
छवियों में
कि जाग उठे
लोक मन की श्रद्धा
उछाह और विश्वास
का सामूहिक जागरण
वृक्ष-पूजा, वनस्पति पूजा
के बाद
स्थापित हो
नया लोक

प्रकट हो
एक साथ
समस्त रूप में
लक्ष्मी, समृद्धि
वसुंधरा, श्री
एकल वैभव देवी,
मातृका, योगिनी,
डाकिनी, शाकिनी
वन देवी
देवकन्या
अलसकन्या
सुर-सुन्दरियाँ
मदनिका
द्वारपालिका

अप्सरा
रूप में आओ
कर दो
शीलभंग
तप भंग
और जाग उठे काम

सुरांगने
संज्ञाजल में गतिशील तत्व लेकर
समुद्र मंथन से आओ
देव परियों
सिखला दो
संसार को
नाट्य और गायन कौशल
कि संसार से
संगीत की आत्मा नष्ट हो चुकी
सूर्य किरणों को
गंधर्वों से संबंधित अप्सरा
वनस्पतियों को
अग्निगंधर्व से संबंधित अप्सरा
जलवायु गंधर्व की अप्सरा

मथुरा के संग्रहालय में आओ
मिश्रकेशी
अलंबुषा
समुद्रा और
पद्मावती अप्सरा

खजुराहो से आओ
प्रकट हो
शृंगार कलापों के साथ
अबुलेपन
नयनांजन
भाल का श्रृंगार
कटि-सज्जा
चरणों पर आलक्तक

अजन्ता से आओ
आरसी देखकर
सामान्य कलापों के साथ
कन्दुक क्रीड़ा
नृत्य और चित्र-कर्म-संग
एलोरा की गुफाओं से आओ
विभिन्न मुद्राओं में
मंदिरों, भित्तियों, मुखशालाओं से
बाहर आओ
आलस्या, तोरणा, मुग्धा
मालिनी, डालमालिका
पद्मगंधा, केतकीभरना
चामरा, गुंठना
शुक-सरिता, नुपुर-पादिका, मर्दला
रूप-सौंदर्य का सार तत्व दो
राजकुल के सौंदर्य-बोध से अलग
स्नान, शृंगार और मधुपान में
अभिसारिका, शालभंजिका
नृत्य, संगीत और

शुकक्रीड़ा के
अनेक बिम्ब
काम एवं शृंगार-प्रवण
सृजित करो
कि बंधनहीन
कला और रस भर दो
जीवन में, प्राणियों के
सौंदर्य और रसमय सम्मोहन
भरने के लिए
आद्य-नारियों
भर दो सौंदर्य
औदार्य और
गहन प्रेम
इस अनसुलझे समय में
प्रतिकूल काल में
गवाक्ष के ऊपर
सौंदर्यमयी यक्षी
तुमको निहारता रहूँ...
मैं....
प्रतिकूल वातावरण में
सिरज सकूँ
आनन्दमयी परिस्थितियाँ

निगुंठ शृंगार को वैधता दो
मुग्धे रतिवामा
धीरा-धीरधीरा
कामवती काम भर दो
यौवनवती यौवन से भर दो

मध्या, प्रगल्भा
लतावेष्ठि तक
आलिंगन दो
उन्मुक्त शृंगार कलाप जगाकर
यक्षरात्रि में दीपोत्सव मनाने
एक शाल्मली मुद्रा बनाकर
कण्ठहार, वलय, कंगन
केयूर, शिरोभूषण, केशभूषण, कुण्डल
झांझे, लच्छे से युक्त
महीन वस्त्रों के पीछे छिपे
झिलमिल अंगों के प्रकाश में
चरम सौंदर्य के आलोक में
रात्रि के अंधकार को
हर लो

बंकिम देह्यष्टि की लय में
तरलता भर दो
नमनीय गति से
सुगठित देह से
रूप और काल की कान्त-मैत्री
और कलाओं को पूर्णता दो

मेरे संग की नायिकाओं
संसार के कोने-कोने से
पर्वत शिखरों से
जल से
महासमुद्र से
आती हुई नायिकाओं

मैं यक्षिणी चन्द्रमा नहीं
सूर्य हूँ
मैं यक्षिणी
पर्वत-शिखरों से उन्नत
अपूर्व शक्तियों की स्वामिनी
और मेरा रूप
उसकी सुन्दरता में
केवल शक्तियाँ हैं—अथाह
और आद्य नारियों
इतनी शक्तिशाली हो जाओ कि
कोई सम्राट न कर पाए
तुमसे छल
कोई ईश्वर तुम्हें
झाँसा न दे सके

संसार को संतुलित
करने की शक्ति
के साथ
वर्तमान लोक में छिपे गहन अंधकार को
हरने के सामर्थ्य के साथ
त्राहिमाम करती जनता को
उसकी शक्तियों को
पहचान कर
संगठित कर
विद्रोह करने की शक्ति देकर
स्त्रीत्व की तलाश में
अपने स्त्री होने के
ससम्मान प्रतिष्ठा अर्जित करने

और अधिकार प्राप्ति हेतु
मेरी सभी सहेलियों आओ
आओ,
अब तुम्हें कविता में सूर्य बनना है
और चट्टान सी कठोर
पर्वत की तरह अडिग
नदी की कोमलता और बहने की संकल्पना
पर घिसे-पिटे पंक्तियों का
समूह नहीं बनना है
मैं केवल यक्षिणी रहना चाहती हूँ
दीदारगंज की यक्षिणी

8

आकाश को
जैसे मलिन करता है
—कुहरा
अब तुम्हें देखना
शास्त्र की तरह नहीं होगा
अपितु तुम्हें देखने का अर्थ
तुम्हारी तरह और
तुम्हारे अनुसार होगा

यक्षिणियों को यक्षिणियों की
तरह देखे संसार
देवियों, दानवियों या मानवियों की तरह नहीं
गंधर्वों की संगिनी की तरह नहीं

या तो
अप्सराओं की तरह
या यक्षिणियों की तरह
ऐसे कोई नहीं
देख सकता तुम्हें
अगर कुत्सित भावनाओं
और
पुरुष-मन के वर्चस्व से
कोई देखे तो
नष्ट कर देना उसे
अपनी पराविद्या से

अरे हमारी लोक कलाकारिनों
अपनी संपूर्ण कलाओं के साथ
निखरकर सामने आओ

अब जबकि
हमारी सभ्यता
विलुप्ति की ओर
अग्रसर है
हमारी संस्कृति पर
लग गया है सूर्यग्रहण
हमारी
आत्मा को ऊपर से
कुचलकर चला गया है
साम्राज्य-विजयी
सात अश्वों वाले
रथ का पहिया

और मैं
घायल हूँ
चोटिल हूँ

9

और यक्ष
मैं सदैव
तुम्हारे संग चलूँगी
कि जीवन
जटिल हो-तो-हो
हमारी सभ्यता
नष्ट हो तो हो
हमारी संस्कृति के
स्वर्ण को
चुरा ले जाए कोई और
तुम्हारी वीरता जो नष्ट हुई
उसे बचाने
और ऊर्जा से
तुम्हें भर देने के लिए
तुम्हें तीनों लोगों में
सर्वश्रेष्ठ वीर
सिद्ध करने
तुम्हें तुम्हारे भीतर की साधना
और तंत्र विद्या के
स्वामी होने की सौगंध
झुकना मत

किसी के सम्मुख
और न डरना
शक्ति की आवश्यकता
जब-जब तुम्हें होगी
मैं दूँगी तुम्हें
मैं...
...मैं यक्षिणी...

तुम्हें देवदूत नहीं
देवताओं से ज्यादा
प्रभावकारी सिद्ध कराने
तुम्हें मनुष्य की
मानसिक कमियों को
दूर करने
तुम्हें;
गन्धर्वों के समान
कलाओं का स्वामी बनाने
तुम्हें तंत्र-मंत्र और यंत्र की
समस्त सिद्धि देने तुम्हें
तुम्हारे संस्कार को
विकसित करने
तुम्हारे अंतस में छिपे
गुणों की पहचान करने
आत्मा की
आंतरिक संरचना में
अमरत्व का बीज देने
तुम्हें जीवन-पथ पर
सदैव संग रखने

तुम्हारे संग
जीने
रहने
और रहकर सदैव
अपने अस्तित्व में रहने
तुम्हारे भीतर छिपी स्त्री को
अपने भीतर छिपे पुरुष को
जगाने हेतु
हम संग रहेंगे

हम संग रहेंगे
कि जैसे
निर्जन प्रदेश में
बस जाए कोई आश्रम
उदास जलपरियों को
मिले जैसे कोई साथी
तुम आना मेरे निकट
जलपरियों की तरह
तुम्हें ले जा सकूँ
जललोक में
और ध्वस्त कर दूँ
तुम्हारा सारा
पुरुष बल का
घोर अहंकार
पुरुष होने के
अहंकार ने
हमारी सभ्यता लुप्त कर दी
तुम न तो

प्रेमी बन पाए
न यक्ष
इसीलिए कि
चोटिल हो गई
हमारी सभ्यता
प्रजातियाँ नष्ट हुईं
भोग-विलास-लिप्सा में
नष्ट-भ्रष्ट हुआ
हमारा धर्म

इसीलिए तुम्हें मैं
अपने निकट लाऊँगी
प्रियवर यक्ष
कि अपने संसार को
पुनजीर्वित
करने की आवश्यकता है

इतिहास कथा
पुराण कथा
विज्ञान कथा से ऊपर
जब ज्यूस आकाश से
पानी गिरा रहा होगा
इन्द्रदेव की कृपा रहेगी
येहोवा अन्तरिक्ष की
खिड़कियां खोलेंगे
फरिश्तों के आकाश में
एक बहुत बड़े
छेदोंवाले टब में

पानी भर दिया होगा
आओ कि,
बारिश कराएँ
..हम...
थोड़ी सी वर्षा
इन्द्र से ऋण लेकर
थोड़ी ज्यूस से
थोड़ी येहोवा से
और संसार के
सभी देवताओं से

जब सूर्य उगेगा
समुद्र में नहाकर
और अपने अलौकिक
अश्वों से जुते
रथ में बैठकर
और फिर
दिनभर चलता हुआ
थक जाएगा
तब फिर अपने अलौकिक अश्वों के साथ
उतरेगा
समुद्र स्नान में
उत्तरायण को

और समस्त जीव
थक-हारकर
लौट आऐंगे
अपने घर

तब प्रियवर
मैं अपनी अंगुलियों से
बंद कर दूँगी
तुम्हारी आँखें
कि तुम
देख न पाओ
कुछ भी
क्योंकि मेरे भीतर जो
बची हुई लज्जा है
उसी से तुम
विजय पाते रहे हो
अहर्निश मेरे
ऊपर
आज उसी लज्जा को
उतार फेंक
मैं तुमसे मिल जाऊँगी
तुम मुझे प्राप्त करना
पर उतना ही
जितना चाहूँगी मैं
और यक्ष
पुरुष मन की आँखों से नहीं
मेरे मन की आँखों से
मुझे देखना
मेरे रूप की सुंदरता
मेरे मन के अनुकूल होगा
कि यक्ष-लोक में
यक्षिणियाँ स्वच्छंद है
कि कोई अतिरिक्त

आग्रह नहीं
हमारे ऊपर

न मातृत्व के लिए
(न प्रजनन के लिए)
न संभोग के लिए

मैं पर्वत की तरह
अडिग हूँ
मैं यक्षिणी
सूर्य हूँ मैं
जिसके प्रकाश से
प्रकाशमान है
आधा त्रिभुवन
आधा संसार

जिसमें होंगी
सिद्धियाँ और पात्रता
मुझे प्राप्त करेगा

10

अमावस की रात
मौन और शांति की रात
जहाँ सब कुछ अदृश्य
चारों तरफ
गहनतम अंधकार

आकाश में
न चंद्रमा न तारे
अमावस की रात
मौन केवल मौन
पसर रहा
चारों ओर मौन
केवल कीट-फतिंगों का स्वर
गूँज रहा चहूँ ओर
गरमी की रात
स्वेद बूंदों से
सर लथपथ
देह लथपथ
लथपथ और उदासी
ऊमस
दुर्गंध
शवों का ढेर
और
मृत्यु की रात
मृत्यु का संगीत
मृत्यु का उत्सव
मगध में
निरा शांति
और ऊब की रात

रात के अंधकार में
जो दीवारें दीख रही हैं
बहुत कठिनाईयों से
वो दीवार भी नहीं है

वो ढेर है
शवों का
ये शव
शहीद सैनिकों के हैं
ये कटे-अधकटे अंगों का ढेर है
इसे दीवार न समझें
ये दुर्गंध
ये जमा हुआ काला खून
जिसने कीचड़ का
रूप ले रखा है
ये शांति
ये घोर हिंसा के
बाद की शांति है
ये हत्यारी शांति ही रात है
जिसके शिकार हुए हैं
या तो सैनिक
या बौद्ध भिक्षु

उत्सव में लीन हैं
ब्राह्मण श्रेष्ठ
के दरबार में
सभी मंत्रीगण
और जय जयकार
कर रही है
उनकी अपनी क्रीत प्रजा
उत्सव में लीन है
शुंग सम्राट
पुष्यमित्र

और गंगा के किनारे
घोर अंधकार
और मृत्यु की रात है।

सम्राट-मंत्री और उनके
सलाहकारों के लिए
उत्सव की रात
हवन और घंटाध्वनि की रात
और नृत्य की रात
बहुसंख्य प्रजा के लिए
डर और आतंक की रात
बौद्ध भिक्षुओं की अंतिम रात
सैनिकों के लिए
यम की रात
मेरे तुम्हारे लिए
मूकदर्शक होने की रात

इस रात कोई रूप-आकृति
नहीं उभर रही
किसी वस्तु को
स्पर्श करने पर
धड़ाम से गिर जाती
वे वस्तुएँ
सभी वस्तुएँ शव हो चुकी हैं
और मृत्यु का रंग
गहरा है।

उजियारे और प्रकाश की किरण

कहीं नहीं
मौन
उदासी
अंधकार
और रात की कालिमा
और चुप्पी
क्या देखोगे
सैनिकों की कटी गरर्दन
या बौद्ध-भिक्षुओं का कटा मस्तक
इस समय की सत्ता ने
नियंत्रित कर ली है रात
कि उन्हीं के नियंत्रण में
सबकुछ

सभ्यता अब
विचित्र परंपराओं का
करेगी पाठ
संस्कृति अब
एक ब्राह्मण-धर्म के
संरक्षण के निमित्त
गढ़ी जाएगी
अन्य धर्म के लोगों को
इस देश से निकाल दो
पाटलीपुत्र अब
पुष्यमित्र शुंग का है
मगध शुंगवंश का है
और
अखण्ड भारत

केवल ब्राह्मणों का

जो शुंग वंश की
आलोचना करेगा
उसे मृत्युदंड दिया जाएगा।

गहन अंधकार में
प्रकाश किरण
दीपक की टिम-टिम
या टिमटिमाते तारे,
कुछ कहीं-कहीं नहीं
अब पाटलीपुत्र
का सौभागय
नरबलि देखने का रह गया है।
कि गहन अंधकार में
अचानक
असंख्य धप-धप-धप-धप...
धरती को
दलमलित करने वाली
ध्वनि पदचाप की
और दूर से आता
सामूहिक स्वर
बुद्धं...शरणं...गच्छामि...
संघं...शरणं...गच्छामि...
धम्मं...शरणं...गच्छामि...
कि कई सनसनाती
तलवार और
चक्क से काट दिए गए

और धरती पर धड़ाम से गिरते
जीवित शव
और अट्टाहास
से काँपता वातावरण
कि चहुँओर से
गिद्धों की चीख
सियारों की हाउ-हाऊ...हू
कुत्तों का भौंकना
और जोर-जोर से
चिल्लाती हुई
चीखती हुई
अहिंसक बौद्ध प्रजा
धम्मं...शरणं...गच्छामि
मशाल लेकर बढ़ते
कुछ सैनिक
उसकी रोशनी में
चारों ओर देखते
ये पुष्यमित्र के सैनिक हैं
जो कर रहे हैं विचार
कोई भन्ते नहीं जीवित बचे
बौद्ध-विहीन कर दो पाटलीपुत्र
कि सामने के वटवृक्ष में
छिप जाते हैं हम
उसके कोटर में
कि इस
भयानक हत्या का
क्रूर नर्त्तन नहीं देख सकते हम
और अब

इस मृत्यु की नगरी में
नहीं रहना हमें
जहाँ
प्रवाहित हो रहा है रक्त
कुएँ से लेकर समूची गंगा में
जिसके साथ
बह रहे हैं
कटे-टूटे अंग देह के
और गंगा में
रक्त-ही-रक्त
टपक रहे हैं
ऊपर से भी
और बढ़ता जा रहा है
पदचाप धप...धप...धप...धप...

जाओ पाटलीपुत्र
तुम बौद्धों को
कर दो समाप्त
पर इसके साथ ही
समाप्त हो गई
पहचान तुम्हारी
अब भविष्य भी
प्राचीनता में तुम्हें
हत्यारा नगर ही कहेगा...
हत्यारा पाटलीपुत्र

11

यक्षिणी
अब इस समय को बचाने
इस लोक को
पाटलीपुत्र को
मगध को
समय को
अंधकार से
बचाने के लिए
तुम्हें आना होगा
कि किसी तरह
बच जाए हमारी संस्कृति

कि,
तुम हो तो
ये सभ्यता है
तुम हो तो
संस्कृति
तुम्हें भूलने लगे लोग
तो पाटलिपुत्र भी
भूलने लगे
कि इतिहास भूल गए
भूल गए भूगोल
भूल गए लोग
अपना प्राचीनतम नगर
रोम-एथेंस याद रह गया
और

कि यक्षिणी;
मेरे आकाश का रंग नीला
मेरे सौभाग्य का रंग है
और कि तुम्हारी
आँखों से नीला रंग
चुरा लेती है धरती
जो आकाश से नीली दिखती है
कि यहाँ ज्ञान का रंग नीला है।
जिसकी स्याही का रंग नीला है।
और नीली स्याही से लिखी गई हैं
संसार की पुस्तकें
नीलाक्षी हो तुम,
कि तुम्हारी नीली आँखों में
नीला दीखता है संसार
कौन कहता है
कि हमारे ...
हरे-भरे संसार को
नीलगाय चर गई
और फिर विलुप्त हो गई

कि इस संसार से
टूट गया भरोसा
कि नष्ट हो गये
प्रत्येक संबंध
प्रत्येक क्रियाकलाप
प्रत्येक वस्तु

और मंडराते रहे
संकट के बादल
तो उसी संकट के बादल को
खेतों में मेघ बनकर
बरस जाने का
आमंत्रण देंगे।
मुक्त कर देना
समस्त ग्रामनारियों को
दिला देना
उन्हें
समस्त अधिकार

और समय अगर
इतिहास को तुम्हारी आँखों से
देखने का है
तो उसमें सिर्फ़
मेरी कायरता
मेरी अकर्मण्यता
मेरा कुतर्क
कि यक्षिणी दीदारगंज की
तुम शिव हो
मातृसत्ता
तुमने बाँचा है इतिहास
तुमसे पूर्ण होती है —कथा
पूर्ण कविता
पूर्ण अन्न
पूर्ण जल
पूर्ण यज्ञ

पूर्ण मंत्र
पूर्ण तंत्र
पूर्ण भोग
पूर्ण आस्था
पूर्ण विश्वास
पूर्ण सृष्टि

आओ कि
धान के शीश को
दुलार करना शेष है
आओ, कि
कनेर के फूल से
उद्घोष कराएँ
नयी सभ्यता का
आओ कि
सरसों के पीले-पीले फूल से
मांगेगे
थोड़ा पीला
भोर के सूरज से मांगेगे
थोड़ा लाल
आकाश से नीला
पानी से पानी
और धरती से
मटमैला
चिड़ियों से
चहकन माँगेगे
हरियाली से हरा
फूलों से गंध

और फलों से
मांगेगे त्याग
पशुओं से
सहनशीलता
पर मनुष्य
नहीं,
मनुष्य ने
अपने सारे तप
साधन, त्याग व्यर्थ किए हैं
मनुष्य
अब यहाँ
कोई नहीं है
केवल जाति
है केवल धर्म

और लोट जाऊँ
मिट्टियों के ढेर पर
कि पाटलीपुत्र में
बचाना है पाटलीपुत्र
कि मनुष्यों से
विहीन नगर
खंडित-विखंडित
असृजित
जिसे गढ़ना है
फिर से
नए संसार को
सुंदर बनाने हेतु

12

केवल तुम हो
प्रकृति-पाटलीपुत्र
के
बीच
तुम हो
तो यह धरती
तुम हो
तो यह आकाश

तुम हो
तो यह संसार
और
तुम हो तभी तो
इस संसार में
रंग बचे हैं सारे
तुम हो तो पाटलीपुत्र
तुम हो तो संसार

नगर
उद्यान
ध्वज-पताकाएँ
साम्राज्य
तुम ही हो कि
पाटलीपुत्र
जी उठेगा

अनंत काल के लिए

क्योंकि,
तुम्हारे बिना
पाटलीपुत्र नगर है
मात्र नगर का कोलाज है
तुम्हारे बिना
पाटलीपुत्र
एक दुर्घटना है
जिसका नाम पटना है

स्तूप
बौद्ध-विहार
धम्मं-शरणं जयघोष
और तुम
इस नगर की
अदृश्य सत्ता हो
जिससे नियंत्रित है
पाटलीपुत्र
और
मेरा जीवन
कि अगर जीऊँ
तो तुम्हारी बाँहों में
रहूँ तो
तुम्हारी छाती पर सिर रखकर
और मरूँ तो
तुम्हारी गोद में

सुनो,
सुनो ऐ आसन्न मृत्यु
जब कभी
आलिंगन करना
मेरे जीवन से
तो पहले
सुला देना
दीदारगंज की यक्षिणी
की गोद में

धीरे-धीरे-धीरे
अंधकार कम होता जा रहा है
आ रही हैं
टुकड़ियाँ प्रकाश की
धीरे-धीरे
बढ़ती जा रही
चारों तरफ़
सूचना मिल रही हो
सूर्योदय की
कि आज
स्वप्नलोक से उतरकर
अपने जनपद सहरसा के
उसी प्रस्तर प्रतिमा के
पास खड़ा हूँ
कंक्रीट की बनी हुई
जो

आपरूपी मूर्ति नहीं है

धीरे-धीरे
टूटता जा
रहा
स्वप्न
कि हम इतिहास तो बना सकते हैं
पर इतिहास में
दोबारा नहीं जा सकते
किसी कालखण्ड को
जी नहीं सकते
ओ टूटते जा रहे स्वप्नों
कैसे ले गए थे निकट
दीदारगंज की यक्षिणी के
जो मौर्यकाल की सबसे
सुंदर प्रतिमा थी
उसके निकट जाकर
मुझे मौर्यकाल
में प्रवेश कराए
कि कोई बता दे
मौर्यकाल के
उस संगतराश का नाम
जिसने जीवन का
सर्वश्रेष्ठ दिया—
दीदारगंज की यक्षिणी
उसकी आत्मा
मेरे भीतर बार-बार

प्रवेश करती है
कि सहरसा भी
कोई वैश्विक नगर नहीं है
क्यों जाने कोई
इस ऐसे ही जीनेवाले
शहर के बारे में
पर तुम्हें स्थापित किया गया
रेलवे ट्रैक के सामने
पीछे मत्स्यगंधा का पानी
रक्तकाली
चौंसठ योगिनी
मंदिर के सामने
पता नहीं क्यों?
तुम सिद्धि देती हो
हर किसी को सार्थक
पर नगरवासी तुम्हें
तुम्हारी प्रतिमा के साथ
छेड़छाड़ करते
तुम्हारे स्तनों पर
गोबर लगाते
दिख जाएँ तो
उनके डर से
भागना मत कहीं
कहाँ जाओगी
अब पाटलीपुत्र
कहीं नहीं है
पाटलीपुत्र

पटना है
और
कुरुक्षेत्र,
कनखल,
हरचरणशीला
नगर भूल जाओ
उज्जयिनी जाओगी तो
निराशा से डूब जाओगी
हर जगह तड़प रही हो।

संसार के
समस्त
संग्रहालयों की
बंदिनी नायिका
कलाओं की पूर्णता में
प्रकृति के परम में
इदम् में
अनवरत सौंदर्य की
मातृ नायिका
संसार को
सुंदर बनाने में
अनवरत्
प्रयासरत्
आद्य नायिका

तुम्हीं ने
सिरजा है

जीवन में आनन्द
तुम्हीं ने दिया है
धरती पर परमसुख
तुम्हीं ने फैलाया
संसार में समता
तुम
आद्य नायिका
आदि-अनादि काल से
मथ रही हो
सृष्टि का दुःख
और
तुम्हारा नायक
समुद्र मंथन में उलझा है
और
आद्य-नायिका
समाधान का मार्ग
तुम्हारी साधना है
तुम
नियति नहीं हो
फल हो असंख्य
श्रमदानों से प्राप्त

इतना शोर
इतना कोलाहल है
जीवन में चहुँओर
कि जीवित रह जाऊँ
तो हाड़-माँस भर

और हाँ! जीवित रहूँ तो
तुम्हारी बाँहों में
रहूँ तो
तुम्हारी छाती पर
सर रखकर
मृत्यु हो तो
तुम्हारी गोद में...

(इति दीदारगंज यक्षिणी प्रसंग 'आद्यनायिका' कथा च...)

●●●